[2008] 1 एस.सी.आर. 6

हिमाचल प्रदेश राज्य

बनाम

पारस राम और अन्य

(आपराधिक अपील संख्या 1/2008)

3 जनवरी, 2008

(अरिजित पसायत व आफताब आलम जे.जे.)

दंड प्रक्रिया संहिता,1973; धारा 378

आरोपी व्यक्तियों ने कथित तौर पर भा द सं की धारा 436 447 और 506 के तहत दंडनीय अपराध कारित किए– विचारण न्यायालय द्वारा बरी कर दिया गया- अपील दायर करने की अनुमति दी गई- उच्च न्यायलय ने बिना कोई कारण बताए खारिज कर दियः सत्यता- तथ्यों के आधार पर, विचारण न्यायालय ने अभियुक्तों को बरी करने के अपने निष्कर्ष पर पहुंचने से पहले साक्ष्यों का सावधानीपूर्वक मूल्यांकन करने में अपने कर्तव्यों का पालन नहीं किया- ऐसी परिस्थितियों में, उच्च न्यायालय को अनुमति दे देनी चाहिए थी, प्रथम अपीलीय न्यायालय के

रूप में पूरे साक्ष्य का फिर से मूल्यांकन करना चाहिए था और अपने निष्कर्ष को निष्पक्ष रूप पारित करना चाहिए था- उच्च न्यायालय ने अपील दायर करने की अनुमति देने से इनकार करके बरी करने के आदेश की बारीकी से जांच खो दी- न्याय के हित में उच्च न्यायालय को अपने न्यायिक विवेक के संकेत देने वाले कारण बताने चाहिए थे। इससे भी अधिक जब उसका आदेश अग्रिम चुनौती के लिए उत्तरदायी हो। इसके अलावा कारण एक आदेश में स्पष्टता लाते हैं और व्यक्तिपरकता को वस्तुनिष्ठता से प्रतिस्थापित करते हैं- कारणों के अभाव ने उच्च न्यायालय के आदेश को असंधारणीय बना दिया है- अपील दायर करने की अनुमति दी गई- नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत- की आवश्यकताएँ।

शब्दों और वाक्यांश:

स्फिनिक्स का गूढ चेहरा- का अर्थ

इस न्यायालय के समक्ष इस अपील में निर्णय के लिए जो प्रश्न उठा वह यह था कि क्या उच्च न्यायालय अपील की अनुमति देने के आवेदन को बिना कोई कारण बताए खारिज करके अभियुक्त व्यक्तियों को बरी करने में सही था |

न्यायालय ने अपील को आंशिक रूप से स्वीकार करते हुए अभिनिर्धारित किया कि- 1.1 विचारण न्यायालय को पूरे साक्ष्य का

सावधानीपूर्वक मूल्यांकन करना था और फिर किसी निष्कर्ष पर पहुंचना था। यदि विचारण न्यायालय ने इस संबंध में चूक की थी तो उच्च न्यायालय अपील पर विचार करके ऐसा कार्य करने के लिए बाध्य था। इस मामले के तथ्यों पर विचारण न्यायालय ने अपने कर्तव्यों का पालन नहीं किया, जैसा कि कानून द्वारा उसे सौंपा गया था। उच्च न्यायालय को ऐसी परिस्थितियों में अपील के आवेदन की अनुमति दे देनी चाहिए थी और उसके बाद प्रथम अपीलीय न्यायालय के रूप में अभिलेख पर पूरे साक्ष्य का फिर से मूल्यांकन करना चाहिए था और आरोपी के अपराध या अन्यथा के संबंध में निष्पक्ष रूप से अपना निष्कर्ष देना चाहिए था। वह ऐसा करने में विफल रहा है (पैरा 8)(11-ए बी)

1.2 इस मामले में शामिल प्रश्न मामूली नहीं थे। उच्च न्यायालय ने बरी किए जाने के खिलाफ अपील दायर करने की अनुमति देने से इनकार करने का कोई कारण नहीं बताया है, और ऐसा लगता है कि वह इस तथ्य से पूरी तरह से अनभिज्ञ है कि इस तरह के इनकार से, अपीलीय फोरम द्वारा बरी किए जाने के आदेश की बारीकी से की गई जांच एक बार और हमेशा के लिए खो गई है। (पैरा 8)(11-सी)

1.3 कारण किसी आदेश में स्पष्टता लाते हैं। न्याय के स्पष्ट विचार पर, उच्च न्यायालय को अपने आदेश में अपने कारणों को, चाहे वह कितना भी संक्षिप्त क्यों न हो, अपनी बुद्धि के प्रयोग का संकेत देना चाहिए

था, खासकर तब जब उसका आदेश चुनौती के आगे के अवसर के लिए उत्तरदायी हो। कारणों की अनुपस्थिति ने उच्च न्यायालय के आदेश को असंधारणीय बना दिया है। (पैरा 8)(11-डी ई)

उत्तर प्रदेश राज्य बनाम बट्टन और अन्य (2001)10 एससीसी 607; *महाराष्ट्र राज्य बनाम विट्ठल राव प्रीतिराव चव्हाण* ए.आई.आर (1982) एससी 1215 और *जवाहर लाल सिंह बनाम नरेश सिंह और अन्य* (1987) 2 एस सी सी 222- पर भरोसा किया।

ब्रीन बनाम अमलगमेटेड इंजीनियरिंग यूनियन (1971) (1) ऑल ईआर 1148 और *अलेक्जेंडर मशीनरी (डुडले) लिमिटेड बनाम क्रैबट्री*; 1974 एलसीआर 120- का संदर्भ दिया गया।

1.4 कारण व्यक्तिपरकता को वस्तुनिष्ठता से प्रतिस्थापित करते हैं। कारणों को दर्ज करने पर जोर यह है कि यदि निर्णय "स्फिंक्स के गूढ चेहरे" को उजागर करता है, तो यह अपनी चुप्पी से, न्यायालयों के लिए अपने अपीलीय कार्य करना या निर्णय की वैधता का निर्णय करने में न्यायिक समीक्षा की शक्ति का प्रयोग करना लगभग असंभव बना सकता है। तर्क का अधिकार एक मजबूत न्यायिक प्रणाली का एक अनिवार्य हिस्सा है, कम से कम कारण न्यायालय के समक्ष मामले पर दिमाग लगाने का संकेत देने के लिए पर्याप्त हैं। एक अन्य तर्क यह है कि प्रभावित

पक्ष जान सकता है कि फैसला उनके खिलाफ क्यों गया है|प्राकृतिक न्याय की हितकारी आवश्यकताओं में से एक दिए गए आदेश के कारणों को स्पष्ट करना है। (पैरा-9) (12-बी सी डी)

पंजाब राज्य बनाम भाग सिंह (2004 (1) एससीसी 547- पर भरोसा किया गया।

2. राज्य को अपील दायर करने की अनुमति दी गई है। उच्च न्यायालय अपील पर विचार करेगा और प्रतिवादियों को औपचारिक नोटिस देने के बाद अपील पर सुनवाई करेगा और वर्तमान अपील में की गई किसी भी टिप्पणी से प्रभावित हुए बिना कानून के अनुसार इसका निपटान करेगा। (पैरा-11) (12-एफ)

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार: आपराधिक अपील संख्या 1/2008

आपराधिक एम पी (एम) संख्या 623/2006 में हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय, शिमला द्वारा दिये गए निर्णय व आदेश दिनांक 12/10/2006 से।

जे एस अत्री - अधिवक्ता अपीलकर्ता

डॉ. आई बी गौर - अधिवक्ता प्रतिवादीगण

न्यायलय का निर्णय डॉ. अरिजित पसायत जे. द्वारा पारित किया गया।

1. अपील की अनुमति दी गयी |

2. दंड प्रक्रिया संहिता 1973 की धारा 378 के संदर्भ में दोषमुक्ति के फैसले पर सवाल उठाने की अनुमति देने से इनकार करना इस अपील में चुनौती का विषय है। अपीलकर्ता-हिमाचल प्रदेश राज्य के अनुसार, बिना कारण बताए हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय का एक पंक्ति का आदेश "खारिज" करना कानून की आवश्यकता को पूरा नहीं करता है।

3. प्रतिवादीगण (बाद में अभियुक्त के रूप में संदर्भित) को भारतीय दंड संहिता 1860 (संक्षेप में भा.द.सं) की धारा 436, 447, 427, 147 और 506 के तहत दंडनीय अपराधों के कथित अपराध के लिए विचारण का सामना करना पड़ा।

4. अभियोजन का मामला संक्षेप में यह है कि शिकायतकर्ता श्रीमती मंजीत कौर गांव अबादा बराना जिला ऊना हिमाचल प्रदेश की रहने वाली हैं। वह एक गृहिणी हैं। दिनांक 30/6/2003 को शाम लगभग 5.45 बजे वह और उसकी भाभी निर्मला देवी अपने घर में टीवी देख रही थीं और उनके बच्चे बाहर खेल रहे थे, जबकि उनके पति गुरदयाल सिंह दवा लाने के लिए कुठार गए थे। इसी बीच उसकी ननद की करीब 13 साल की बेटी,

जिसका नाम पूनम है, वहां आई और बोली कि कुछ लोग उनके खेत से लताएं उखाड़ रहे हैं। इस पर वे दोनों बाहर आए और देखा कि उपरोक्त नामित आरोपी ऐसा ही कर रहे थे और शिकायतकर्ता और उसकी भाभी को देखकर आरोपी शिकायतकर्ता के घर की ओर आए और उन्हें चुनौती दी कि वे उनका घर आग से जला देंगे। आरोपी बलबीर सिंह, बलदेव सिंह, जय गोपाल और राधे श्याम अपने हाथों में मशालें लिए हुए थे और उन मशालों की मदद से उन्होंने उनके फूस के घर में तीन तरफ से आग लगा दी। जब शिकायतकर्ता और उसकी भाभी ने घर से अपना सामान बाहर निकालने की कोशिश की तो आरोपियों ने उन्हें आग में फेंकने की धमकी दी। इस पर परिवादिया घबरा गई और वह अपनी भाभी व बच्चों के साथ चिल्लाते हुए कुठार कलां की ओर दौड़ पड़ी। उनकी चीखें सुनकर संतोष कुमारी पत्नी जोग राज और यशपाल पुत्र बिहारी लाल दोनों निवासी कुठायार कलां मौके पर पहुंचे। इसके बाद शिकायतकर्ता कुठार कलां गई और अपने पति को इस घटना के बारे में बताया जिन्होंने फायर ब्रिगेड और पुलिस को सूचित किया। पुलिस मौके पर पहुंची और शिकायतकर्ता का बयान बतौर प्रदर्श पी ड-1/ए अंतर्गत धारा 154 दंड प्रक्रीया संहिता (संक्षिप्त में द.प्र.सं) लेखबद्ध किया तथा प्रथम सूचना रिपोर्ट प्रदर्श पी ड-12/ए अभियुक्तगण के विरुद्ध दर्ज की गयी। जांच के दौरान पुलिस ने घटनास्थल की तस्वीरें तैयार कीं और उस जमीन का सीमांकन प्राप्त किया जिस पर संबंधित घर स्थित था। जांच पूरी होने के बाद आरोप पत्र दायर किया गया और आरोपी व्यक्तियों

पर मुकदमा चलाया गया। गवाह के रूप में तेरह व्यक्तियों से पूछताछ की गई। पीडब्लू 1 और 4 के अलावा अन्य को चश्मदीद गवाह बताया गया। उच्च न्यायालय ने पाया कि एफआईआर दर्ज करने में कुछ देरी हुई थी और हालांकि दावा किया गया था कि बड़ी संख्या में लोग मौके पर इकट्ठा हुए थे। गवाहों ने आरोपी व्यक्तियों को नहीं देखा होगा। उच्च न्यायालय ने यह भी पाया कि पक्षों के बीच कुछ विवाद था और इसलिए अभियोजन पक्ष की बात संदिग्ध थी। तदनुसार, आरोपी व्यक्तियों को बरी कर दिया गया।

5. अपीलकर्ता राज्य ने अपील की अनुमति के लिए एक आवेदन दायर किया। उच्च न्यायालय ने आवेदन का निपटारा निम्नलिखित तरीके से किया:

"ख़ारिज कर दिया गया"

6. अपीलकर्ता राज्य के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार उच्च न्यायालय के लिए यह कारण बताना अनिवार्य था कि अपील की अनुमति देने की प्रार्थना क्यों असमर्थनीय पाई गई| ऐसे किसी भी कारण के अभाव में उच्च न्यायालय का आदेश बचाव योग्य नहीं है। प्रतिवादियों के विद्वान अधिवक्ता ने आदेश का समर्थन किया।

7. संहिता की धारा 378(3) दोषमुक्ति की स्थिति में अपील की अनुमति देने की उच्च न्यायालय की शक्ति से संबंधित है। संहिता की धारा 378(1) और (3) इस प्रकार है:

> "378(1) उप-धारा (2) में अन्यथा प्रदान किए गए को छोड़कर और उप-धारा (3) और (5) के प्रावधानों के अधीन, राज्य सरकार, किसी भी मामले में, लोक अभियोजक को निर्देश दे सकती है कि वह उच्च न्यायालय के अलावा किसी अन्य न्यायालय द्वारा पारित दोषमुक्ति के मूल या अपीलीय आदेश या पुनरीक्षण में सत्र न्यायालय द्वारा पारित दोषमुक्ति के आदेश के खिलाफ उच्च न्यायालय में अपील प्रस्तुत करे।
>
> (3) उप-धारा (1) या उप-धारा (2) के तहत किसी भी अपील पर उच्च न्यायालय की अनुमति के बिना विचार नहीं किया जाएगा।"

7. विचारण न्यायालय को पूरे साक्ष्य का सावधानीपूर्वक मूल्यांकन करना था और फिर किसी निष्कर्ष पर पहुंचना था। यदि विचारण न्यायालय ने इस संबंध में चूक की थी तो उच्च न्यायालय अपील पर विचार करके ऐसा कार्य करने के लिए बाध्य था। इस मामले के तथ्यों पर विचारण न्यायालय ने अपने कर्तव्यों का पालन नहीं किया जो कानून उस पर न्यस्त किया

गया था। उच्च न्यायालय को ऐसी परिस्थितियों में अनुमति दे देनी चाहिए थी और उसके बाद प्रथम अपीलीय न्यायालय के रूप में स्वतंत्र रूप से अभिलेख पर पूरे साक्ष्य की फिर से समीक्षा करनी चाहिए थी और अभियुक्त के अपराध या अन्यथा के संबंध में अपने निष्कर्ष निष्पक्ष रूप से पारित करने चाहिए थे। वह ऐसा करने में विफल रहा है। इसमें शामिल प्रश्न मामूली नहीं थे। उच्च न्यायालय ने बरी किए जाने के खिलाफ अपील दायर करने की अनुमति देने से इनकार करने का कोई कारण नहीं बताया है और ऐसा लगता है कि वह इस तथ्य से पूरी तरह से अनभिज्ञ है कि इस तरह के इनकार से अपीलीय फोरम द्वारा बरी किए जाने के आदेश की बारीकी से की गई जांच एक बार और हमेशा के लिए खो गई है। उच्च न्यायालय द्वारा बरी किए जाने के विरुद्ध अपील पर जिस तरह से कार्रवाई की गई है उसमें बहुत कुछ अपेक्षित नहीं है। कारण किसी क्रम में स्पष्टता लाते हैं। न्याय के स्पष्ट विचार पर उच्च न्यायालय को अपने आदेश में चाहे वह कितना भी संक्षिप्त क्यों न हो अपने दिमाग के प्रयोग का संकेत देते हुए अपने कारण सामने रखने चाहिए थे, खासकर तब जब उसका आदेश चुनौती के आगे के अवसर के लिए उत्तरदायी हो। कारणों के अभाव के कारण उच्च न्यायालय का आदेश संधारणीय नहीं है। इसी प्रकार का विचार उत्तर प्रदेश राज्य बनाम बट्टन और अन्य (2001 (10)एस सी सी 607) में व्यक्त किया गया। लगभग दो दशक पहले महाराष्ट्र राज्य बनाम विट्ठल राव प्रीतिराव चव्हाण मामले में अनुमति प्रदान करने के लिए एक

आवेदन से निपटने के दौरान सकारण आदेश की वांछनीयता पर प्रकाश डाला गया था। ऐसे मामलों में सकारण आदेश को न्यायिक रूप से अनिवार्य माना गया है। जवाहर लाल सिंह बनाम नरेश सिंह और अन्य के मामले में इस दृष्टिकोण को दोहराया गया। इस न्यायालय द्वारा कानून की घोषणा का पालन करने के लिए न्यायिक अनुशासन को किसी भी प्राधिकारी या न्यायालय द्वारा किसी भी बहाने से नहीं छोड़ा जा सकता है, चाहे वह किसी राज्य का सर्वोच्च न्यायालय ही क्यों न हो भारत के संविधान 1950 के अनुच्छेद 141 (संक्षेप में संविधान) से अनभिज्ञ।

9. प्रशासनिक आदेशों के संबंध में भी ब्रीन बनाम अमलगमेटेड इंजीनियरिंग यूनियन 1971 (1) सभी ईआर 1148 में लॉर्ड डेनिंग एमआर ने कहा "कारण बताना अच्छे प्रशासन के बुनियादी सिद्धांतों में से एक है"। अलेक्जेंडर मशीनरी डूडली लिमिटेड बनाम क्रैबट्री 1974 एलसीआर 120 में यह देखा गया कि कारण देने में विफलता न्याय से इनकार करने के समान है। कारण निर्णय लेने वाले के दिमाग से संबंधित विवाद और उस पर आए निर्णय या निष्कर्ष के बीच जीवंत संबंध हैं। कारण व्यक्तिपरकता को वस्तुनिष्ठता से प्रतिस्थापित करते हैं। कारणों को दर्ज करने पर जोर यह है कि यदि निर्णय "स्फिंक्स के गूढ़ चेहरे" को उजागर करता है, तो यह अपनी चुप्पी से, न्यायालयों के लिए अपने अपीलीय कार्य करना या निर्णय की वैधता का निर्णय करने में न्यायिक समीक्षा की शक्ति का प्रयोग

करना लगभग असंभव बना सकता है। तर्क का अधिकार एक मजबूत न्यायिक प्रणाली का एक अनिवार्य हिस्सा है| कम से कम कारण न्यायालय के समक्ष मामले पर दिमाग लगाने का संकेत देने के लिए पर्याप्त हैं। दूसरा तर्क यह है कि प्रभावित पक्ष यह जान सकता है कि निर्णय उसके विरुद्ध क्यों गया है। प्राकृतिक न्याय की हितकारी आवश्यकताओं में से एक आदेश के कारणों को स्पष्ट करना है दूसरे शब्दों में बोलना। स्फिनिक्स का गूढ चेहरा आमतौर पर न्यायिक या अर्ध.न्यायिक प्रदर्शन के साथ असंगत है। दूसरा तर्क यह है कि प्रभावित पक्ष यह जान सकता है कि निर्णय उसके विरुद्ध क्यों गया है। प्राकृतिक न्याय की हितकारी आवश्यकताओं में से एक आदेश के कारणों को स्पष्ट करना है, दूसरे शब्दों में, बोलना। "स्फिंक्स का गूढ चेहरा" आमतौर पर न्यायिक या अर्ध-न्यायिक प्रदर्शन के साथ असंगत है।

10. उपरोक्त पहलुओं को पंजाब राज्य बनाम भाग सिंह (2004 (1) एस एस सी 547) के मामले में भी इस न्यायालय द्वारा उजागर किया गया था।

11. उपरोक्त कानूनी स्थिति को देखते हुए उच्च न्यायालय का आक्षेपित निर्णय संधारणीय नहीं है और इसे रद्द किया जाता है। हम राज्य को अपील दायर करने की अनुमति देते हैं। उच्च न्यायालय अपील पर विचार करेगा और प्रतिवादियों को औपचारिक नोटिस देने के बाद अपील

पर सुनवाई करेगा और वर्तमान अपील में की गई किसी भी टिप्पणी से प्रभावित हुए बिना कानून के अनुसार इसका निपटान करेगा। अपील को संकेतित सीमा तक अनुमति दी जाती है।

एस.के.एस.

अपील आंशिक स्वीकार।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' के जरिए अनुवादक न्यायिक अधिकारी मेघना व्यास, आर.जे.एस. द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय वादी के प्रतिबंधित उपयोग के लिए उसकी भाषा में समझाने के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।